# ''न्यायिक मानदण्ड एवं जवाबदेही बिल 2010''
# का
# सुदृढ़ीकरण

विचार मंथन हेतु टिप्पणी

भारत सरकार ने दिसम्बर 2010 में भारतीय संसद के पटल पर प्रस्तावित ''न्यायिक मानदण्ड एवं जवाबदेही बिल 2010'' रखा है। न्यायाधीशों के आचरण के सम्बन्ध में मानदण्ड निर्धारित करने एवं जाँच करने की प्रक्रिया प्रस्तावित की गई। इसके अतिरिक्त भारतीय सविंधान के प्रावधानों के अन्तर्गत नियुक्त किये गये न्यायधीशों के विरुद्ध महाभियोग के संबंध में भारतीय संसद द्वारा महामहिम राष्ट्रपति जी को अवगत कराये जाने की प्रक्रिया भी इस बिल के अन्तर्गत निर्धारित की गई है।

वर्तमान में प्रभावशील ''Judges (Cinquiry) Act, 1968'' के स्थान पर उक्त बिल को उपयोग में लाये जाने का प्रस्ताव, संसद की कार्मिक, अभाव अभियोग तथा कानून एवं न्यायिक मामलों की स्थायी समिति के पास विचाराधीन है।

प्रस्तुत टिप्पणी के अन्तर्गत उक्त प्रस्तावित बिल के प्रावधानों के न केवल विवादास्पद पहलुओं की पहचान की गई है बल्कि निष्पक्ष न्याय के अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों एवं अनुकरणीय उदाहरणों को ध्यान में रखते हुए भारत की उच्च न्यायपालिका के सदस्यों की और अधिक जवाबदेही सुनिश्चित करने एवं वर्तमान में प्रचलित न्यायिक प्रक्रिया को और अधिक सुदृढ़ बनाये जाने के विकल्प भी सुझाये गये हैं। टिप्पणी के अन्त में समग्र न्यायिक सुधारों के सम्बन्ध में कुछ अन्य बिन्दुओं पर भी चर्चा की गई है।

**प्रस्तावना :**

1. एक आम भारतीय नागरिक की नजरों में हमारी उच्च न्यायपालिका जिसके अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय आते हैं, एक मात्र ऐसे संस्थान है जो कि न केवल हमारे मूलभूत अधिकारों की तत्परता से रक्षा करता है बल्कि संविधान के आधारभूत ढाँचे को उसके मूल स्वरूप में बनाये रखता है, अपितु लोक सेवकों पर प्रदत्त शक्तियों के मनमाने उपयोग की प्रवृति पर भी अंकुश लगाता है।

   भारतीय संविधान की धाराएं एवं उनके तहत् बनाये गये कानून इस प्रकार की कई शक्तियाँ प्रदान करते हैं जिनके रहते हमारी न्यायपालिका हमें स्वतन्त्र, निष्पक्ष एवं कानून सम्मत व्यवस्था सुनिश्चित कराती है। सुरक्षित कार्यकाल, सुनिश्चित वेतन न्यायिक पद पर आसीन होकर प्रदान किये गये निर्णयों के क्रम में व्यक्तिगत मुकदमें बाजी से मुक्ति तथा पद से हटाये जाने की जटिल प्रक्रिया आदि भारतीय संविधान के कुछ ऐसे प्रावधान है जो कि एक न्यायाधीश को निर्भीकता एवं निष्पक्षता पूर्वक अपने दायित्वों का निर्वहन करने के लिए सक्षम बनाते हैं।

2. साल दर साल प्राप्त होने वाली रिपोर्टों के अनुसार आम जनता की यह मान्यता है कि नौकरशाही का एक बहुत बड़ा भाग भ्रष्ट है। यद्यपि गत कुछ सालों में पूर्व के वर्षों की अपेक्षा विधानसभा चुनावों में मतदान का प्रतिशत बढ़ा है किन्तु फिर भी धन वितरित कर मतदाताओं को अपने पक्ष में

मतदान करने के लिए आकर्षित करना, जाँचों एवं घपलों को दबाने के लिए धन खर्च करना तथा सांसद अथवा विधायक स्थानीय क्षेत्र विकास फण्ड को खर्च करने में प्राप्त होने वाली भ्रष्टाचार की शिकायतों के कारण भारत वर्ष के मतदाता तथा कर दाताओं में सांसदों तथा विधायकों के प्रति आस्था का निरन्तर हास हो रहा है। इन परिस्थितियों में जब शासन प्रणाली के तीन में से दो अंग आम जनता की अपेक्षाओं के अनुरूप कार्य करने में असफल हो रहे है, जनता को न्यायपालिका ही उम्मीद का एक टापू नजर आती है जिससे वह आशा करती है कि लम्बी प्रतीक्षा एवं अधिक व्यय के बावजूद भी उसे निष्पक्ष न्याय अवश्य प्राप्त होगा।

3. पिछले कुछ दिनों में उच्च न्यायपालिका के कुछ सदस्यों के विरूद्ध भ्रष्ट एवं दुराचरण के कुछ ऐसे प्रकराण उजागर हुए है जिनसे जन साधारण में न्यायपालिका के प्रति विश्वास को डगमगा दिया है। उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के निवास स्थान की दहलीज पर नोटों से भरी बोरी का बरामद होना इस प्रकार के भ्रष्ट आचरण का एक उदाहरण है। इसके अतिरिक्त ''किसी न्यायाधीश के विरूद्ध भ्रष्टाचार की शिकायतों की जाँच की जाकर सही पाये जाने पर आवश्यक कार्यवाही की जावेगी अथवा नहीं'' इस बात का फैसला करने की शक्तियाँ अपने पास रख कर न्यायपालिका ने जन मानस में इस बात का अहसास कराया है कि भारतीय संविधान में उसे प्राप्त स्वतंत्रता की आड़ में वह अपने सदस्यों के लिए भ्रष्टाचार के आरोपों से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयास कर रही है। इसी प्रकार न्यायालयों में अपनाई जाने वाली पद्यति में भी भ्रष्ट आचरण की शिकायतें प्रकाश में आई हैं जिनमें किसी पीठासीन न्यायाधीश के निकट संबंधी वकील द्वारा उसी न्यायाधीश के समक्ष मुकदमे की पैरवी करने जैसे प्रकरण आज कल आम हो गये हैं। गत कुछ समय पहले उच्च न्यायपालिका के एक माननीय न्यायाधीश द्वारा एक जनहित याचिका के संबंध में सूचना का अधिकार अधिनियम को उनके कार्यालय पर लागू नही होने का निर्णय देकर जन साधारण में न्यायपालिका की छवि एवं उसके प्रति आदर को और अधिक धूमिल किया है।

4. उस समय किसी के लिए यह आश्चर्य की बात नहीं लगी कि उच्च न्यायपालिका को ''लोकपाल'' के अधिकार क्षेत्र में लेने की मांग जन साधारण के स्तर से उठी। ''लोकपाल'' नामक संस्थान जोकि लोक सेवकों के विरूद्ध भ्रष्ट आचरण की शिकायतें प्राप्त कर उनकी जाँच करेगा, की स्थापना किये जाने के प्रस्ताव संसद के विचाराधीन हैं तथा इसके विधेयक का प्रारूप तैयार करने के लिए भारत सरकार ने एक संयुक्त समिति का गठन किया है। उच्च न्यायपालिका के सदस्यों को लोकपाल के अधिकार क्षेत्र में लिये जाने के प्रश्न पर उक्त समिति के सदस्यों में भी भारी वैचारिक मतभेद हैं। यही नही, सेवानिवृत न्यायाधीशों, कानूनविदों, वकीलों तथा गणमान्य नागरिकों में भी न्यायपालिका में संक्रमण कर रहे भ्रष्टाचार एवं अक्षयता का निवारण करने के तरीके पर भी भिन्न–भिन्न मत हैं।

5. उक्त पृष्ठभूमि के आधार पर प्रस्तुत टिप्पणी में निम्न तीन चर्चा एवं बहस के बिन्दुओं का परीक्षण किया गया

    भारतीय संसद के पटल पर रखे गये न्यायिक मानदण्ड आचरण एवं जवाबदेही बिल के प्रभावों का परीक्षण

    न्यायपालिका की स्वायत्तता के संबंध में अन्तर्राराष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित सिद्धांतों का परीक्षण।

    प्रस्तावित बिल में सम्मिलित होने से रह गये कुछ न्यायिक सुधार के बिन्दु।

इस आधार पर प्रस्तावित बिल के सुदृढ़ीकरण के सुझाव विचारार्थ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

**दृष्टिकोण की भिन्नता :**

6. उच्च न्यायपालिका के सदस्यों के विरूद्ध प्राप्त होने वाली दुराचरण की शिकायतों (जिसमें भ्रष्टाचार भी शामिल है) की जाँच किसे करनी चाहिये ?

कानून के पंडितों, विख्यात वकीलों, समाज के विशिष्ठ व्यक्तियों तथा मीडिया के प्रतिनिधियों के एक घटक की यह मान्यता है कि न्यायपालिका के सदस्यों के विरूद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच न्यायपालिका के ही किसी सदस्य से कराया जाना न्याय संगत नहीं है। उक्त घटक के अनुसार न्यायपालिका के सदस्यों एवं अन्य लोक सेवकों के विरूद्ध इस प्रकार की शिकायतें प्राप्त करने एंव उनकी जाँच करने के लिए प्रस्तावित ''लोकपाल'' जैसा एक शक्तिशाली एवं स्वायत्त संस्थान होना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो इस प्रकार के संगठन में कानून के एक या दो विद्वान व्यक्तियों को शामिल किया जा सकता है। दूसरी और संसद के पटल पर जो बिल रखा गया है उसमें राष्ट्रीय स्तर पर सेवा निवृत अथवा सेवारत उच्च न्यायपालिका के सदस्यों की एक न्यायिक निगरानी समिति का गठन किया जाना प्रस्तावित है जिसके दो गैर न्यायिक सदस्यों में एक सेवारत ऐटोरनी जनरल होगा।

हमारी यह सुदृढ़ मान्यता है कि उच्च न्यायपालिका के सदस्यों के विरूद्ध प्राप्त होने वाली भ्रष्टाचार एवं अक्षमता की शिकायतों की जाँच किये जाने के लिए पृथक से एक प्रणाली विकसित होनी अत्यावश्यक है किन्तु न्यायिक स्वायत्तता की दृष्टि से इस प्रणाली का संतुलित होना अत्यावश्यक है। न्यायपालिका की स्वायत्तता होना भारतीय संविधान का एक प्रमुख एवं आधारभूत अंग है। वर्ष 2003 के लाटीमर हाउस सिद्धांतों के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अभिव्यक्त किये गये विचारों के अनुसार निगरानी प्रणाली एवं न्यायपालिका की स्वायत्तता में तालमेल आवश्यक है। बिना किसी न्यायिक पृष्ठभूमि के सदस्यों वाली समिति को न्यायपालिका की निगरानी का दायित्व सौंप देने से न्यायपालिका की स्वतंत्रता सम्भव नहीं हो सकती है। कुछ विकल्प जिनके द्वारा न्यायिक निगरानी समिति एवं न्यायपालिका दोनों की ही स्वतंत्रता सुनिश्चित की जा सकती है, का विवरण नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

7. **राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी समिति की संरचना एवं इसके सदस्यों की चयन प्रक्रिया।**
भारतीय संसद के पटल पर रखे गये प्रस्तातिव बिल के प्रावधानों के अनुसार न्यायाधीशों के विरूद्ध प्राप्त होने वाली दुराचरण की शिकायतें को एक पाँच सदस्यों की कमेटी नागरिकों से सीधे ही प्राप्त कर जांच करेगी। इसके अतिरिक्त यह कमेटी, किसी न्यायाधीश को पद से हटाने के लिए संसद के किसी भी सदन में पारित किये गये प्रस्ताव एवं संसद से इस संबंध में प्राप्त सभी अभिलेखों का अध्ययन करेगी। इस कमेटी के सदस्यों के रूप में सर्वोच्च न्यायालय के सेवारत न्यायाधीश अथवा देश के उच्च न्यायालयों के एक मुख्य न्यायाधीश का मनोनयन भारत के सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा किया जावेगा। भारत के एटार्नी जनरल तथा एक अन्य विशिष्ठ नागरिक का कमेटी के गैर न्यायिक सदस्य के रूप में मनोनयन भारत के राष्ट्रपति द्वारा किया जावेगा। उक्त प्रस्तावित कमेटी के पीठासीन अधिकारी के रूप में भारत के किसी सेवानिवृत मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा की जावेगी।

हमारी यह मान्यता है कि उक्त प्रस्तावित निगरानी कमेटी की संरचना न्यायिक स्वतंत्रता के परिपेक्ष्य में पर्याप्त नहीं है। इसके दो प्रमुख कारण हैं प्रथम कि न्यायिक सदस्यों का मनोनयन भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा स्वविवेक से किया जावेगा। इसके अतिरिक्त गैर न्यायिक सदस्यों एवं पीठासीन अधिकारी की नियुक्ति भारत के महामहिम राष्ट्रपति द्वारा की जावेगी जो कि अप्रत्यक्ष निगरानी समिति के सदस्यों के चयन का यह तरीका पारदर्शिता के सिद्धातों के विपरीत है।

दूसरा कारण यह है कि समिति में भारत के एटार्नी जनरल को रखा गया है जो कि भारत सरकार के न्याय विभाग का वरिष्ठतम लोक सेवक है। यह सम्भव है कि वरिष्ठतम न्यायिक अधिकारी होने के नाते अपने कर्तव्यों के निर्वहन में उसे किसी ऐसे न्यायाधीश के न्यायालय में सरकारी पक्ष प्रस्तुत करने के लिए उपस्थित होना पड़ सकता है, जिसकी जाँच निगरानी समिति द्वारा की जा रही हो। इस दृष्टि से एटार्नी जनरल की इस कमेटी के सदस्य के रूप में नियुक्ति की बात अपने आप में विवादास्पद एवं अनुचित है।

उक्त प्रस्तावित निगरानी समिति के पीठासीन अधिकारी तथा सदस्यों की चयन प्रक्रिया हेतु एक दूसरे विकल्प पर विचार किया जा सकता है। इस विकल्प के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय के सेवारत न्यायाधीशों में से निगरानी समिति के सदस्य का चयन सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों एवं मुख्य न्यायाधीश द्वारा सामूहिक रूप से किया जावे। इसी प्रकार भारत वर्ष के उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों में से किसी एक मुख्य न्यायाशीध का चयन भी सभी उच्च न्यायालयों के सभी मुख्य न्यायाधीशों द्वारा सामूहिक रूप से किया जावे। समिति के अन्तर्गत प्रस्तावित दो गैर न्यायिक सदस्यों का चयन करने हेतु भारत के राष्ट्रपति महोदय की अध्यक्षता में एक कमेटी द्वारा किया जा सकता है जिसमें प्रधानमंत्री, सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा संसद में विरोधी दल के नेता, सदस्य हों। इसी प्रकार की सामूहिक चयन प्रक्रिया से पारदर्शिता बनी रहेगी।

इस सम्बन्ध में एक तीसरी सोच यह भी उभर कर आयी है कि उपर वर्णित सामूहिक चयन प्रक्रिया के अपनाये जाने से प्रस्तावित निगरानी समिति के सदस्य के रूप में मनोनयन के लिए सिफारिश एवं दलगत प्रचार जैसी अस्वस्थ परिपाटियों को प्रोत्साहन मिलेगा। अतः इस प्रकार की सोच रखने वाले घटक का यह प्रस्ताव है कि सर्वोच्च न्यायालय के सेवारत न्यायाधीशों में से वरिष्ठतम् न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों में से वरिष्ठतम् मुख्य न्यायाधीश को स्वतः ही निगरानी समिति का सदस्य मान लिया जावे। उक्त प्रस्तावित निगरानी समिति में न्यायपालिका के सदस्यों का एकाधिकार न हो, इस उद्देश्य से राष्ट्रपति जी, कानून की जानकारी रखने वाले दो विशिष्ठ गैर न्यायिक व्यक्तियों को सदस्य मनोनीत कर सकते हैं समिति का पीठासीन अधिकारी कोई भी सर्वोच्च न्यायालय का सेवानिवृत मुख्य न्यायाधीश हो सकता है।

चाहे भारतीय संसद अपने विवेक से उक्त समिति के गठन की किसी भी प्रक्रिया का चयन करें, हमारी मान्यता यह है कि यह राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी समिति इतनी पारदर्शी एवं पुष्ठ होनी चाहिये कि कोई व्यक्ति इस पर किसी प्रकार का लांछन नहीं लगा सके एवं इसकी सर्वोच्च स्तर की गरिमा एवं इसके प्रति जनसाधारण का आदर बना रहना चाहिए।

इसके अतिरिक्त इस बिल में उन सदस्यों की सेवा शर्तों का उल्लेख नहीं है जो सेवारत न्यायाधीश नहीं हैं। उचित हो कि इस कमी को दूर करते हुए बिल में स्पष्ट रूप से ऐसे सदस्यों की सेवा शर्तों का समावेश कर लिया जाना चाहिये।

8. **न्यायिक निगरानी प्रक्रिया एवं उसे क्रियान्वित करने वाले संस्थागत ढाँचे में सुधार** :
प्रस्तुत बिल में न्यायाधीशों के विरूद्ध प्राप्त होने वाली शिकायतों को प्राप्त करने एवं उन पर कार्यवाही करने के लिए तीन स्तर का संस्थागत ढाँचा प्रस्तावित किया गया है। इस व्यवस्था के सर्वोच्च स्तर पर राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी समिति है जो कि समस्त शिकायतों एवं किसी न्यायाधीश को पद से हटाने के लिए संसद की कार्यवाही का विवरण प्राप्त करेगी।

व्यवस्था के दूसरे स्तर पर परीक्षण दल गठित किये गये है जो कि प्राप्त शिकायतों का अध्ययन कर उनका विश्लेषण करेंगे। यह परीक्षण दल सर्वोच्च न्यायालय में तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय में गठित किये जावेंगे जिनकी अध्यक्षता सम्बन्धित न्यायालय के सेवारत न्यायाधीश करेंगे। इस प्रकार एक ही न्यायालय के न्यायाधीश अपने साथ कार्य करने वाले दूसरे न्यायाधीश के विरूद्ध प्राप्त होने वाली शिकायत का परीक्षण करेगा। प्रारम्भिक परीक्षण के आधार पर यदि कोई विस्तृत जांच का बिन्दु पाया जावेगा तो प्रथम स्तर की कमेटी एक जाँच कमेटी का गठन कर प्रकरण की जाँच करायेगी। इस प्रकार गठित की गई विस्तृत जाँच कमेटी, इस व्यवस्था का तीसरा स्तर होगी। यद्यपि प्रस्तावित बिल में प्रत्येक स्तर की कार्यवाही के लिए एक समय सीमा निर्धारित कर दी गई है किन्तु बिल में तीसरे स्तर की विस्तृत जाँच कमेटी के सदस्यों की पात्रता के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं लिखा गया है। इस सम्बन्ध में हमारी यह मान्यता है कि प्रस्तावित निगरानी कमेटी के परिपेक्ष्य में तीन स्तरीय ढाँचे की आवश्यकता नहीं है। यह भी व्यवहारिक एवं उचित प्रतीत नहीं होता है कि एक ही न्यायालय का न्यायाधीश अपने ही सहकर्मी न्यायाधीश के विरूद्ध शिकायत का परीक्षण करें अतः उक्त तीन स्तरीय व्यवस्था के स्थान पर प्रस्तावित निगरानी समिति को एक स्थायी रूप से कार्यशील समिति के रूप में स्थापित किया जाना चाहिये। यह स्थायी समिति शिकायतों एवं संसद से प्राप्त प्रसंगों को प्राप्त कर उनका परीक्षण करे तथा आवश्यकता पड़ने पर एक विस्तृत जाँच दल का गठन करे इस प्रकार की व्यवस्था से सभी प्रकार की शिकायतों पर होने वाली कार्यवाही में एकरूपता आवेगी। इस निगरानी समिति के अन्तर्गत कार्य करने वाले सभी न्यायिक अधिकारीगण पूर्ण कालिक रूप से कार्य करें एवं इस समिति में उनके पदस्थापन के दौरान उन्हें किसी अन्य प्रकार के न्यायिक अथवा प्रशासनिक कार्य का दायित्व नहीं दिया जावे। विस्तृत जाँच के लिए शीर्ष निगरानी समिति दो सदस्यों का जाँच दल गठित कर सकती है। यदि जाँच किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के विरूद्ध हो तो जाँच दल का एक सदस्य उच्च न्यायालय की निगरानी कमेटी में मनोनीत मुख्य न्यायाधीश, तथा यदि जाँच सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के विरूद्ध हो तो जाँच दल का एक सदस्य सर्वोच्च न्यायालय की निगरानी कमेटी में मनोनीत न्यायाधीश को नियुक्त किया जाना उचित रहेगा।

9. किसी भी न्यायाधीश के विरूद्ध किन–किन मामलों में जाँच की जा सकती है ? क्या दुराचरण को कानून के अन्तर्गत विस्तार से परिभाषित किया जाना चहिए ?

संसद के पटल पर रखे गये प्रस्तावित बिल में एक न्यायाधीश के आचरण के सम्बन्ध में मानदण्ड निर्धारित किये गये है। (अनुच्छेद 3) इस बिल के अन्तर्गत वर्ष 1999 में आयोजित मुख्य न्यायाधीशों के सम्मेलन में पुनः निर्धारित किये गये न्यायाधीशों के न्यायिक जीवन के मूल्यों एवं

मानदण्डों को कानूनी मान्यता प्रदान करने का प्रयास किया गया है। बिल में निम्न बिन्दुओं को एक न्यायाधीश के दुराचरण की श्रेणी में माना गया है।

1. अपने निकट सम्बन्धी, जो कि बार के सदस्य हैं, को अपने स्वयं के न्यायालय में वकील के रूप में उपस्थित होने की अनुमति प्रदान करना।
2. बार के उन सदस्यों के साथ घनिष्ठ मित्रता पूर्ण सम्बन्ध रखना जो कि उनके न्यायालय में वकील के रूप में पैरवी करते हैं।
3. अपने निवास स्थान के भवन में अपने निकट सम्बन्धी जो कि बार के सदस्य हैं, को वकालत पेशे के व्यवसाय के उपयोग में लिये जाने की अनुमति प्रदान करना।
4. ऐसे मामलों की सुनवाई स्वयं करना जिसमें उनके निकट सम्बन्धी एक पार्टी हो।
5. राजनैतिक मामलों अथवा ऐसे मामलों, जो कि उनके न्यायालय में विचाराधीन है अथवा विचारार्थ एवं कानूनी न्यायार्थ प्रस्तुत किये जाने है, के सम्बन्ध में सार्वजनिक रूप से किसी प्रकार की टिप्पणी करना।
6. स्वयं के द्वारा न्यायालय में दिये गये निर्णय के सम्बन्ध में मीडिया के समक्ष साक्षात्कार देना।
7. उन व्यक्तियों, जो कि निकट सम्बन्धी नहीं हैं, से उपहार स्वीकार करना अथवा उनका आतिथ्य स्वीकार करना।
8. सोसायटी, ट्रस्ट अथवा कम्पनी के ऐसे मामलों में स्वयं सुनवाई करना, जिनमें उनके स्वयं की हिस्सेदारी अथवा निजी स्वार्थ निहित हो।
9. आर्थिक लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से सट्टा लगाना अथवा आन्तरिक रूप से ग्रुप व्यापार में लिप्त होना।
10. अपने पद के प्रभाव का प्रयोग करते हुए किसी प्रकार के व्यापार एवं व्यवसाय में भाग लेना अथवा आर्थिक लाभ या अन्य सुविधाएं प्राप्त करना।
11. किसी ऐसी संस्था की सदस्यता ग्रहण करना जो कि जाति, धर्म, लिंग, मूल निवास अथवा क्षेत्रीयता में भेद रख कर अपनी गतिविधियाँ सम्पादित करती हैं।
12. उपर वर्णित दुराचरणों के आधार पर न्यायिक प्रक्रिया अथवा निर्णयों में पक्षपात करना।

प्रस्तावित बिल के अनुसूची 1 के अन्तर्गत एक न्यायाधीश के आचरण के सम्बन्ध में वे सभी बिन्दु शामिल किये गये है जो कि ''न्यायिक जीवन के मूल्यों'' शीर्षक के अन्तर्गत सूचीबद्ध हैं। इन बिन्दुओं के विपरीत आचरण एक न्यायाधीश जैसे उच्चपद पद आसीन व्यक्ति के लिए दुराचरण की श्रेणी में आता है जिसके लिए न्यायिक निगरानी समिति के समक्ष शिकायत की जा सकती है। प्रत्यक्ष रूप से एक न्यायाधीश द्वारा जन सामान्य से पद के अनुरूप दूरी न बना कर रखना, समय की पाबंदी न होना, अपने न्यायिक कार्य के प्रति पर्याप्त निष्ठा का अभाव आदि कुछ ऐसे मामले हैं जो कि न्यायाधीश का दुराचरण सिद्ध होने का कारण बन सकते हैं। इस प्रकार के दृष्टांतों के आधार पर संसद में भी किसी न्यायाधीश को हटाने के लिए कार्यवाही प्रारम्भ की जा सकती है।

कानून की पर्याप्त जानकारी रखने वाले एक घटक की यह मान्यता है कि न्यायाधीश के आचरण सम्बन्धी मानदण्डों को परिभाषित करने की पेशकश दो कारणों से भारतीय संविधान के अन्तर्गत प्रदान की गई न्यायपालिका की स्वायत्तता के सिद्धान्तों के विपरीत है। पहला कि भारतीय संसद को यह अधिकार प्रदत्त है कि वह उच्च न्यायपालिका के किसी भी सदस्य को दुराचरण के आरोप में पद से हटाने की सिफारिश कर सकती है। अतः संसद के लिए किसी न्यायाधीश के आचरण के सम्बन्ध में मानदण्ड निर्धारित करना कानूनी रूप से अनुचित है क्योंकि ऐसा करने से यह

सम्भव है कि न्यायपालिका के सदस्यों द्वारा निर्भीक एवं निष्पक्ष फैसले नहीं किये जा सकेंगे। हमारे संविधान के आर्टिकल 124 (5) के प्रावधानों के अनुसार संसद को केवल निम्न दो बिन्दुओं के सम्बन्ध में कानून बनाने तथा उनको लागू करने की प्रक्रिया निर्धारित करने की शक्तियाँ प्रदत्त हैं।

किसी न्यायाधीश को हटाने के लिए राष्ट्रपति महोदय के समक्ष अनुरोध पत्र प्रस्तुत करना।
किसी न्यायाधीश के दुराचरण अथवा अक्षमता की शिकायतों की तथ्यात्मक जाँच करवाना।

संविधान के अन्तर्गत संसद की न्यायपालिका के सदस्यों के आचरण के मानदण्ड निर्धारित करने वाले कानून को बनाने का अधिकार नहीं है। भारत के संविधान की रचना करते समय संविधान सभा में हुई बहस में भी आम राय यही थी कि संसद को शक्तियाँ प्रदान करने के बजाय न्यायपालिका को ही अपने स्वयं की आचार संहिता का निर्माण करने की स्वतंत्रता दी जावे। इस लिहाज से हमारी यह मान्यता है कि राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी समिति ही बिना किसी दखलदांजी के न्यायाधीशों के लिए आदर्श आचार संहिता बनाये जाने के लिए उपयुक्त स्थान है।

इस संबंध में दूसरा तर्क यह है कि दुराचरण के दृष्टांतों को सूचीबद्ध कर उन्हे कानून में सम्मिलित कर लेने से न्यायाधीशों के दुराचरण की आखिरी सीमाएं निर्धारित हो जावेंगी। भविष्य में यदि बदलती हुई परिस्थितियों में दुराचरण के कुछ नये दृष्टांत सामने आते हैं तो उन्हे कानूनी सूची में सम्मिलित करने के लिए कानून के संशोधन की सारी प्रक्रिया दोहरानी पड़ेगी अन्यथा उस प्रकार के दुराचरण के सम्बन्ध में आवश्यक कार्यवाही उसके सूचीबद्ध होने तक नहीं की जा सकेगी। इस हिसाब से हमारी यह मान्यता है कि दुराचरण को परिभाषित करने का अधिकार केवल राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी समिति में ही निहित होना चहिये। यह समिति देश, काल, परिस्थितियों एवं न्यायिक जीवन के मूल्यों को ध्यान में रखकर समय–समय पर न्यायाधीशों के आचारण के नियमों में संशोधन करती रहेगी।

पारदर्शिता एवं जवाबदेही के हिमायती कुछ लोगों का यह भी मत है कि आचरण नियमों में संशोधन करने से पहले उस निगरानी कमेटी के लिए यह उपयुक्त होगा कि प्रस्तावित संशोधन को सार्वजनिक रूप से प्रकाशित कर जनता की राय जान ली जावे। इसके अतिरिक्त प्रस्तावित संशोधन की सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों एवं उच्च्य न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशों से भी सामूहिक रूप से चर्चा कर ली जावे।

इस संबंध में एक तीसरी सोच यह भी उभर कर आई है कि प्रस्तावित बिल में न्यायाधीश के सदाचार के न्यूनतम नियम तो लिपिबद्ध कर लिये जावे किन्तु निगरानी समिति को नये प्रकार के मामलों की जाँच करने की शक्तियाँ दे दी जावें। इस प्रकार की सोच रखने वाले इस घटक की यह मान्यता है कि आचरण के मानदण्ड न्यायिक सद्व्यवहार के लिए बनाये जाते है ना कि किसी न्यायाधीश के आचरण को कानूनी रूप से बाध्य करने के लिए। अतः निगरानी कमेटी को दी जाने वाली शक्तियों में लचीलापन आवश्यक है। इस घटक की यह भी मान्यता है कि प्रस्तावित बिल में न्यायिक जीवन के मूल्यों को निर्धारित करने वाली मुख्य न्यायाधीशों की वर्ष 1999 की कॉफ्रेस की सिफारिशों के उस अंश को भी शामिल किया जावे जिसमें यह लिखा है कि सदाचरण के यह मूल्य केवल उदाहरण मात्र है इन्हे अंतिम नहीं माना जावे। देशकाल परिस्थिति के अनुरूप इस सूची में और उदाहरण भी जोड़े जा सकते है।

इस सम्बन्ध में सभी की यह दृढ़ मान्यता है कि बंगलोर न्यायिक आचरण 2002 के अनुरूप उच्च न्यायपालिका के सदस्यों के आचरण के मानदण्ड और अधिक स्पष्ट रूप से परिभाषित होने चाहिए।

**10. जाँच करने में पारदर्शिता** :

प्रस्तावित बिल के अनुच्छेद 29(2) के अन्तर्गत यह प्रावधान रखा गया है कि जाँच कमेटी द्वारा जाँच की कार्यवाही गुप्त रूप से सम्पादित की जावेगी। इसके विपरीत जिस जज़ इन्कवायरी एक्ट 1968 का स्थान यह बिल लेने जा रहा है उसको न्यायाधीशों के विरूद्ध जाँच का सम्पादन बंद कमरे में किये जाने जैसी कोई बाध्यता नहीं है। अतः जाँच सम्पादन की पुरानी पारदर्शी प्रक्रिया को ही प्रस्तावित बिल को सम्मिलित किया जाना न्याय के हित में होगा। शिकायत प्राप्त होने पर उसके प्रारम्भिक परीक्षण की कार्यवाही बंद कमरे में की जा सकती है क्योकि प्राप्त होने वाली शिकायत एक प्रकार से बिना सबूत के लगाये गये आरोप मात्र होती है। इस बात की आवश्यकता का भी अनुभव किया जा रहा है कि जाँच सम्पादन की प्रक्रिया को इस प्रकार से अनावश्यक रूप से अपमानित अनुभव न करे एवं जन साधारण के बीच उसका सम्मान पूर्ववत रहे। इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिये कि आरोपित व्यक्ति की प्रतिष्ठा को मीडिया द्वारा किसी भी प्रकार उछाला न जावे। आरोप मुक्त होने की स्थिति में यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिये कि आरोपित अधिकारी के अपने पद पर वापस लौटने पर उसकी प्रतिष्ठा, मान सम्मान पूर्ववत् हो जावे।

इस सम्बन्ध में एक यह भी विचारधारा प्रचलन में है कि शिकायत प्राप्त करने, उसका परीक्षण करने तथा आवश्यकता पड़ने पर जाँच सम्पादित करने की कार्यवाही उपर वर्णित कारणों से गुप्त रखी जानी चाहिये किन्तु एक बार प्रक्रिया के पूर्ण होने पर, जाँच के निष्कर्ष एवं लिये गये निणर्य को सार्वजनिक कर दिया जाना चाहिये।

एक तीसरी विचारधारा यह भी है कि समस्त प्रक्रिया खुले रूप से सम्पादित की जानी चाहिये। फिर भी यदि कोई बात आरोपित अधिकारी के गोपनीयता के अधिकार का हनन करती है तो उसे गुप्त रखा जा सकता है।

उक्त सभी विचारधाराओं के विश्लेषण से बात निकलती है कि किसी न्यायाधीश के विरूद्ध जाँच सम्पादन की प्रक्रिया में पारदर्शिता एवं गोपनीयता का एक संतुलन बनाया जाना चाहिये जिससे आरोपित अधिकारी की प्रतिष्ठा को भी आघात न लगे तथा जन साधारण में जाँच प्रक्रिया के प्रति विश्वसनीयता भी बनी रहे।

**11. न्यायाधीशों के विरूद्ध दुराचरण के छोटे मामले जिनके लिए उन्हें पद से हटाये जाने की आवश्यकता है** :

भारतीय संविधान के प्रावधानों के अनुसार यदि न्यायपालिका के किसी सदस्य के विरूद्ध दुराचरण, अथवा अक्षमता सिद्ध हो जाती है तो उसे पद से हटा दिया जाना चाहिये। किन्तु दुराचरण के कुछ ऐसे छोटे मामले भी होते है जिनमें आरोपित न्यायाधीश को पद से हटाने की आवश्यकता नहीं होती है। प्रस्तावित बिल के अन्तर्गत इस प्रकार के छोटे मामलों में चेतावनी पूर्ण लिखित सलाह आदि दिये जाने का प्रावधान रखा गया है। अन्य देशों में भी दुराचरण के कारण

न्यायाधीशों के विरुद्ध लघु शास्तियाँ लगाये जाने का प्रावधान है। उदाहरणार्थ अमरीका में उन न्यायाधीशों जिनके विरुद्ध दुराचरण के छोटे मामले सिद्ध होते है, उन्हे या तो बन्द कमरे में प्रताड़ित किया जाता है अथवा उन्हें स्वेच्छा से सेवानिवृति प्राप्त करने की सलाह दी जाती है। इसी प्रकार फ्राँस में ऐसे न्यायाधीशों की लिखित में निन्दा की जाती है और इसका उल्लेख उनके सेवाभिलेख में भी किया जाता है। इसके अतिरिक्त फ्राँस में आरोपित न्यायाधीशों के स्थानांतरण, अधिकारों को छीन लेना, पदावनति अथवा निश्चित अवधि तक कार्य करने पर प्रतिबंध आदि का दंड दिये जाने का प्रावधान है। इस प्रकार लघु शास्तियों का प्रावधान किया जाना आवश्यक एवं उचित है किन्तु इसका उपयोग सावधानी पूर्वक एवं न्यायसंगत तरीके से किया जाना चाहिये। अतः इस सम्बन्ध में हमारी यह मान्यता है कि इस प्रकार के प्रावधानों का बिल में समावेश किये जाने से पूर्व इस मुद्दे पर विस्तार से बहस की जानी चाहिये। हमारी यह भी मान्यता है कि यदि इन प्रावधानों को लागू किया जाना है तो उन्हे पहले उच्च न्यायालय में लागू करके देखना चाहिये।

## 12. झूठी और जानबूझ कर सताने के उद्देश्य से की गई शिकायतों का निस्तारण :

प्रस्तावित बिल में किसी न्यायाधीश के विरुद्ध झूठी एवं सताने के उद्देश्य की गई शिकायतों के सम्बन्ध में कठोर शास्तियाँ लगाये जाने का प्रावधान रखा गया है। शिकायत झूंठी पाये जाने पर शिकायत कर्ता को 5 वर्ष का कारावास तथा अर्थदण्ड की सजा का प्रावधान रखा गया है। अर्थदण्ड की ऊपरी सीमा 5 लाख रूपये तक रखी गई है। इस सम्बन्ध में हमारी मान्यता है कि इतनी कठोर सजा का प्रावधान रखे जाने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार के मामलों में 6 माह के कारावास की सजा पर्याप्त है। अर्थदण्ड की सीमा भी काफी कम की जा सकती है।

इस प्रावधान के सम्बन्ध में एक दूसरी विचारधारा यह है कि बिल के अनुच्छेद 53(1) के प्रावधानों में कुछ और संशोधन किये जाने की आवश्यकता है। झूंठी और सताने के उद्देश्य से शिकायतें करने वालों के विरुद्ध आवश्यक कार्यवाही होनी चाहिये किन्तु यह शास्तियाँ केवल उन परिस्थितियों में लगाई जानी चाहिये जबकि न्यायाधीश के विरुद्ध लगाये गये आरोप सिद्ध नहीं हों तथा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से यह साबित हो जाने की शिकायत बुरी नीयत से की गई हों। भविष्य में भी यदि यह पाया जावे कि शिकायतकर्ता द्वारा झूठी शिकायत की पुर्नरावृर्ति की गई है, तो ऐसे शिकायतकर्ता की सज़ा और अधिक कड़ी की जानी चाहिये।

## 13. परिसम्पत्तियों की घोषणा की अनिवार्यता के सम्बन्ध में संशोधन की आवश्यकता :

प्रस्तावित बिल के प्रावधानों में यह अनिवार्य कर दिया गया है कि उच्च न्यायपालिका के सदस्य अपनी स्वयं की, अपने पति अथवा पत्नि की तथा अपने पर आश्रित बच्चों की चल व अचल सम्पत्तियों एवं देनदारियों की घोषणा करेंगे। इस प्रकार की घोषणा प्रतिवर्ष सक्षम अधिकारी को प्रस्तुत की जावेगी। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के लिए सक्षम अधिकारी भारत का राष्ट्रपति हैं तथाा अन्य न्यायाधीशों के लिए सम्बन्धित मुख्य न्यायाधीश हैं। सक्षम अधिकारी से यह अपेक्षित है कि इस प्रकार प्राप्त परिसम्पत्तियों की सूचना को वह प्रतिवर्ष सार्वजनिक करें यद्यपि इस प्रकार की व्यवस्था का प्रावधान करना प्रशंसनीय है किन्तु इस व्यवस्था को सम्बन्धित न्यायाधीशों एवं उसके परिवार के सदस्यों की सुरक्षा के साथ जोड़ा जाना चाहिये तथा परिसम्पत्तियों से सम्बन्धित सभी सूचना को सार्वजनिक नही किया जाना चाहिये अन्यथा इसका दुरुपयोग होना सम्भव है। अन्य देशों में भी लोक सेवकों की परिसम्पत्तियों की सभी सूचनाएं जैसे

पेन नम्बर, बैंक खाता नम्बर आदि गोपानीय रखे जाते हैं। अतः मुख्य अधिनियम अथवा उसके अन्तर्गत बनाये गये उप नियमों में परिसम्पत्तियों की घोषणा में गोपनीय रखे जाने वाले मानदण्डों को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिये।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी कमेटी को इस आशय का अधिकार दिया जाना चाहिये कि किसी न्यायाधीश के विरुद्ध भ्रष्टाचार की शिकायत प्राप्त होने पर वह आरोपी न्यायाधीश एवं उसके परिजनों की घोषित परिसम्पत्तियों की सूचना का परीक्षण कर सकें।

**उपसंहारात्मक टिप्पणी :**

इस आलेख के माध्यम से प्रस्तावित बिल के प्रावधानों की धाराओं के क्रम से विस्तृत चर्चा किया जाना सम्भव नहीं है। फिर भी प्रस्तावित बिल के अन्दर ऐसे बहुत से छोटे–छोटे मुद्दे रह गये हैं, जिन पर विस्तृत चर्चा के उपरान्त संशोधन किया जाना आवश्यक है। उचित होगा कि संसद में बिल पारित करने से पूर्व इन सभी मुद्दों पर धाराबार विस्तार से चर्चा कर ली जावे। इसके अतिरिक्त न्यायिक सुधारों की दृष्टि से विस्तृत चर्चा के निम्न कुछ अन्य मुद्दे हैं जिन पर गौर किया जाना उचित होगा।

1. उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया।
2. अखिल भारतीय सेवाओं के अनुरूप भारतीय न्यायिक (जूडिशियल) सेवा का गठन।
3. संविधान की धारा 124(7) में संशोधन।

**1. उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति :**

प्रारम्भ में भारतीय संविधान के प्रावधानों के अन्तर्गत उच्च न्यायपालिका के सदस्यों की नियुक्ति की शक्तियाँ कार्यपालिका में समाहित थीं। कार्यपालिका भारत के मुख्य न्यायाधीश के विचार विमर्श के उपरान्त उच्च न्यायपालिका के अन्तर्गत न्यायाधीश की नियुक्ति की अभिशंसा राष्ट्रपति को करती थी। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गये कई निर्णयों के फल स्वरूप अब उच्च न्यायपालिका के न्यायाधीशों की नियुक्ति सर्वोच्च न्यायाधीशों द्वारा सामूहिक रूप से चयन किया जाकर अभिशंसित की जाती है। संविधान के प्रावधानों से अलग हट कर अपनाई गयी यह चयन प्रक्रिया हाल ही में कई प्रकार के विवादों से ग्रस्त हो गई तथा अब कठोर आलोचना का विषय बन गई है। इस प्रकार की नियुक्तियों के लिए पात्र व्यक्तियों के चयन की प्रक्रिया में सुधार लाने के उद्देश्य से एक ''नेशनल जूडीशियल कमीशन'' स्थापित किये जाने की माँग उभर कर सामने आयी है। इस प्रकार के न्यायिक कमीशन की सिफारिश श्री एम.एन. वैंकटचलैया, भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, श्री जे.एस. वर्मा, सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश तथा श्री वी.आर.कृष्ण अय्यर, विख्यात कानून विज्ञ की एक तीन सदस्यों की न्यायिक सुधारों की सिफारिश करने के लिए बनाई गई कमेटी की सिफारिशों का केन्द्र बिन्दु थी। इस प्रकार की न्यायिक आयोग की संरचना के लिये प्रस्तावित किया गया है कि भारत के उपराष्ट्रपति इस कमीशन के अध्यक्ष होंगे तथा यह आयोग पूरी पारदर्शिता से उच्च न्यायपालिका के सदस्यों का चयन करेगा। किन्तु इस प्रकार के आयोग को स्थापित करने के लिए संविधान में संशोधन करना पड़ेगा क्योंकि इसके लिए

मात्र एक सामान्य कानून बना देने से संविधान के अन्तर्गत निर्धारित की गई न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया को नहीं बदला जा सकता।

**2. एक अखिल भारतीय न्यायिक सेवा का गठन :**

भारतीय संविधान की धारा 312 के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि एक या एक से अधिक अखिल भारतीय न्यायिक सेवा का गठन किया जा सकता है जो कि भारतीय प्रशासनिक सेवा तथा भारतीय पुलिस सेवा की तर्ज पर गठित की जावेगी। यदि इस प्रकार की सेवा गठित करने का प्रस्ताव राज्यसभा से अनुमोदित होकर लोकसभा को भेजा जाता है तो हमारी संसद इस सेवा के गठन की मंजूरी देने के लिए सक्षम है। न्यायिक सुधारों के लिए सिफारिश करने वाली तीन न्यायाधीशों की कमेटी ने इसकी पुरजोर सिफारिश की है क्योंकि ऐसा करने से देश के विभिन्न भागों से न्याय के क्षेत्र की प्रतिभाओं का चयन हो सकेगा। प्रस्तावों के अनुसार यह चयन अधीनस्थ न्यायपालिका के सदस्यों, जो कि जिला जज से नीचे के स्तर के न हों, में से किया जावेगा। इस प्रकार विभिन्न प्रांतों से इस सेवा में चयन से इस सेवा का स्वरूप हमारे देश की संगठित शासन व्यवस्था के अनुरूप ही रहेगा। चूंकि उक्त प्रस्तावित अखिल भारतीय न्यायिक सेवा के सदस्य विभिन्न राज्यों के न्यायालयों में कार्य करेंगे तथा इसका प्रभाव राज्यों के बजट पर भी पड़ेगा अतः इस प्रकार की सेवा के गठन के लिए राज्य सरकारों की सहमति प्राप्त किया जाना आवश्यक होगा।

इस सम्बन्ध में हमारी यह मान्यता है कि इस सेवा का गठन मात्र संसद में कानून बना देने के मुकाबले एक अत्यन्त जटिल प्रक्रिया होगी।

**3. संविधान की धारा 124(7) में संशोधन :**

संविधान की धारा 124(7) सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश को पद से हटने के बाद देश के किसी न्यायालय में पैरवी करने के लिए प्रतिबंधित करती है। इसके सम्बन्ध में एक विचारधारा यह है कि संविधान की इस धारा में संशोधन किया जा कर सर्वोच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीशों को किसी मामले में अपनी राय अभिव्यक्त करने अथवा किसी विवाद में अध्यक्षता करने के लिए भी प्रतिबंधित किया जावे। इसके अपवाद स्वरूप यदि भारत के राष्ट्रपति अथवा किसी प्रान्त के राज्यपाल यदि लोकहित में लोक कल्याण की दृष्टी से किसी मामले में भूतपूर्व न्यायाधीश को राय देने के लिए आमंत्रित करते हैं, तो वह अपना मत अभिव्यक्त कर सकेंगे। इस सम्बन्ध में सम्पूर्ण कार्य अवधि के लिए उन्हे वेतन तथा कार्यालय आदि की सुविधाऐं सम्बन्धित सरकार द्वारा उपलब्ध करायी जावेंगी।